भाद्र शुक्ल ६, मंगलवार, दिनांक - १७-०९-१९६९
गाथा-४१, श्लोक-५८, ५९, प्रवचन-८

दसलक्षणी पर्व का तीसरा दिन है, आर्जव धर्म, आर्जव।

मुमुक्षु : प्रतिदिन एक-एक धर्म...

पूज्य गुरुदेवश्री : एक-एक का तो यहाँ कथन करना है। करने का तो एक साथ धर्म का होता है। आत्मा का सम्यग्दर्शन प्रगट करके चारित्र का आराधन तो प्रतिदिन करना। वह तो कथन दस प्रकार क्रमसर आता है। कहो, सेठी! एक-एक करना न एक दिन में? ऐसा कहते हैं। करने का प्रश्न कहाँ है? यहाँ तो आत्मा अनादि (का है)। दस दिन पर्यूषण का है। दसलक्षणी पर्व कहा जाता है। बारह महीने में तीन बार आता है। माघ में, चैत्र में और भाद्र में। यह विशेष, भाद्रपद में विशेष (होता है)।

आत्मा... मोक्ष का कारण वास्तव में तो चारित्र है और चारित्र लेने से पहले उसको सम्यग्दर्शन और ज्ञान तो प्रगट होना चाहिए। सम्यग्दर्शन-ज्ञान हुए बिना चारित्र होता नहीं। चारित्र बिना दस प्रकार का आराधन वास्तव में होता नहीं। तो यहाँ तीसरा दिन आर्जव का है। सरलपना ... ... क्या कहते हैं? मन में जो बात होवे, उसी को वचन से प्रगट करना। मन में कुछ हो और वचन में कुछ कहना, वह तो माया है। नहीं कि मन में कुछ दूसरा हो और वचन में दूसरा बोले। इसको आचार्य आर्जव धर्म कहते हैं। मीठी-मीठी बात लगाकर दूसरे को ठगना, इसको अधर्म कहते हैं, अनार्जव धर्म। आर्जव से विरुद्ध।

इनमें आर्जव धर्म से स्वर्ग की प्राप्ति होती है। यहाँ यह लिया है। आर्जव धर्म से... निश्चय आर्जव धर्म जो है सरलता, वह तो मुक्ति का कारण है। परन्तु बीच में जो विकल्प उठते हैं, उससे पुण्यबन्ध हो जाये तो स्वर्ग का कारण होता है। पाठ में ऐसा लिया है। अधर्म नरक में ले जाता है।.... आर्जव शुभभाववाला हो तो उससे स्वर्ग जाता है और उससे विरुद्ध हो तो नरक जाता है। समझ में आया? इसलिए आर्जव धर्म का पालन करनेवाले भव्य जीवों को किसी के साथ माया से बर्ताव नहीं करना चाहिए।

आचार्य कहते हैं कि यदि एक बार भी किसी के साथ मायाचारी की जाये तो यह मायाचारी बड़ी कठिनता से सम्मुच्य किये हुए अहिंसा, सत्य (आदि) मुनियों के गुणों को फीका बना देती है। इसका विश्वास भी नहीं कर सके। यह तो मायाचारी है। वे गुण आदरणीय नहीं रहते हैं। मायारूपी मकान में नाना प्रकार के क्रोधादि शत्रु छुपे हुए हैं। मायाचारी को क्रोध भी होता है, मान भी होता है, लोभ भी होता है—ऐसा कहते हैं। इस मायाचार से उत्पन्न हुए पाप से जीव अनेक प्रकार के दुर्गति मार्ग में भ्रमण करता फिरता है। इसलिए धर्मात्मा को माया अपने पास भी नहीं भटकने देना चाहिए।

आर्यपना सरलता, हृदय की सरलता। चार के प्रकार के नामकर्म बँधते हैं न? उसमें वह आता है। अवक्र मन, अवक्र वचन, अवक्र काया... चार बोल आते हैं या नहीं? चार प्रकार से नामकर्म बँधते हैं न? अविसंवाद और किसी को ठगना नहीं, चार, बस। समझ में आया? सरलपने का मन, सरलपने की वाणी, सरलपने का भाव हो ऐसा और किसी से झगड़ा आदि न करना, ऐसा शुभभाव हो तो स्वर्ग में जाये और शुभ से भिन्न अपने आनन्दस्वरूप की सरलता की परिणति हो तो साथ में फिर मुक्ति भी होती है। लो, यह दो गाथा हुई।

अब चलता अधिकार। नियमसार, ४१वीं गाथा चलती है। यहाँ आया, देखो अन्तिम में। टीका... टीका। **पूर्वोक्त चार भाव आवरणसंयुक्त होने से मुक्ति का कारण नहीं है।** है? चार भाव आवरणसहित हैं। क्या अर्थ किया है, खबर है? कल ही किया था। ठीक किया, पोपटभाई को पकड़ा अभी। लो, यह खबर नहीं, कहते हैं। क्या कहते हैं? आत्मा में जो पुण्य, पाप, दया, दान, व्रत, भक्ति का परिणाम होता है, वह उदयभाव है, वह पर्याय है उदय की। और जो सम्यग्दर्शन और चारित्र होता है, वह उपशमभाव है, वह भी एक पर्याय है आत्मा की निर्मल उपशम पर्याय है। और एक क्षयोपशम पर्याय होती है ज्ञान की, दर्शन की, वीर्य की, श्रद्धा आदि की पर्याय क्षयोपशम अवस्था होती है और एक क्षायिक अवस्था होती है। केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक समकित आदि। तो वह चारों भाव आवरणसंयुक्त होने से...

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : किस अपेक्षा से आवरणसंयुक्त कहा ? कि राग, द्वेष, दया, दान भाव तो आवरणवाले हैं, स्वयं दुःखरूप और विकार है। परन्तु उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक जो निर्मल पर्याय है, उसमें कर्म के निमित्त की अभाव की अपेक्षा लेकर उसको आवरणवाला कहा गया है। समझ में आया ? कल कहा था। पाँच भाव में चार भाव तो आश्रय करनेयोग्य नहीं। आहाहा! इसलिए आवरणसंयुक्त कहा है। समझ में आया ? आत्मा की पर्याय में दया, दान, व्रत, भक्ति का भाव—उदयभाव (होता है), वह आश्रय करनेयोग्य नहीं, धर्म का कारण नहीं। और जो उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक वीतरागीपर्याय प्रगट हुई हो, क्षायिक समकित, वह भी आश्रय करनेयोग्य नहीं। यह कल चला था। समझ में आया ? पण्डितजी! बाबूलालजी! देखो! आज तो हिन्दी लिया। कल (गुजराती में) चला था।

चार पूर्व नाम ऊपर कहे। प्रत्येक का विस्तार किया है। उपशम के कितने भेद हैं ? समझ में आया ? आत्मा परमस्वाभाविक भावरूप त्रिकाली परमपारिणामिकभावस्वरूप नित्य है। वस्तु आत्मा की पर्याय में जो उत्पाद-व्यय होता है राग का या क्षायिक समकित का या क्षयोपशमसमकित का या क्षयोपशमज्ञान का या क्षयोपशमचारित्र का, वह जो आत्मा में पर्याय उत्पन्न होती है, उत्पाद-व्ययवाली है। तो उत्पाद-व्ययवाली है तो वह व्यवहार है। वह व्यवहार है। तो वह व्यवहार आदरणीय नहीं है। सेठ! आहाहा! समझ में आया ?

पाँच भाव में एक परमपारिणामिक त्रिकाली ज्ञायकभाव, ध्रुवभाव, नित्यभाव सहजानन्दस्वभाव का सागर पूर्णस्वरूप ध्रुव, कूटस्थ, निष्क्रिय, जिसमें राग की क्रिया तो नहीं, परन्तु मोक्ष की और मोक्ष के मार्ग की क्रिया भी जिसमें नहीं। ऐसा जो ध्रुव आत्मा परमस्वभावभाव, वह आश्रय करनेयोग्य है। धर्मी को वह भाव आश्रय करनेयोग्य है। आश्रय करनेयोग्य है ध्रुव।

मुमुक्षु : शुभ-अशुभ....

पूज्य गुरुदेवश्री : है नहीं। आश्रय करते हैं, शुभ का आश्रय करे, वह मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया ? शुभ का आश्रय करे तो मिथ्यादृष्टि है और शुद्ध प्रगटा हुआ, उसका

आश्रय करने जाये तो विकल्प उठते हैं। तो पुण्यबन्ध का कारण है।

मुमुक्षु : शिष्यों का भला करे।

पूज्य गुरुदेवश्री : भला-बला कुछ है नहीं। भला एक आत्मस्वभाव त्रिकाली। समझ में आया? सूक्ष्म बात है, भाई!

नियमसार का अधिकार है। नियमसार का अर्थ मोक्ष का मार्ग। निश्चय सम्यग्दश्रन, निश्चय सम्यग्ज्ञान, निश्चय चारित्र वह पर्याय है। वह मोक्षमार्ग की पर्याय है। वह संवर, निर्जरा की विकाररहित वीतरागीपर्याय है। वह भी यहाँ कहते हैं कि आश्रय करनेयोग्य नहीं है। डॉक्टर! सुना भी नहीं हो, क्या होगा? जय नारायण! भगवान की करो भक्ति, करो इससे। धूल भी नहीं होगा, सुन न अब! लाख, करोड़ भक्ति कर, वह तो राग है। राग का आश्रय तो नहीं, परन्तु सम्यग्दृष्टि को तो पूर्ण परमस्वभाव ध्रुव नित्यानन्द का आश्रय है। क्योंकि उसका आश्रय करने से निर्मल वीतरागी पर्याय नयी प्रगट होती है। समझ में आया?

पूर्वोक्त चार भाव... भाव शब्द से पर्याय। विकारी पर्याय, उपशम पर्याय, क्षयोपशम पर्याय या क्षायिक पर्याय। चार भाव अर्थात् चार पर्याय **आवरणसंयुक्त होने से...** क्योंकि उसमें कर्म के अभाव की निमित्तता आती है। तो इस अपेक्षा से उसको आवरणसहित कहा गया है। वह **मुक्ति का कारण नहीं है।** आहाहा! कहो, देव-गुरु-शास्त्र का निमित्त मुक्ति का कारण नहीं। उसका प्रेम लगा राग, वह मुक्ति का कारण नहीं। परन्तु उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक धर्म की दशा प्रगट हुई हो, वह भी मुक्ति का कारण नहीं है। समझ में आया? वीतरागस्वभाव, भाई! अलौकिक है। लोगों को मिला नहीं। बाहर की सिरपच्ची में जिन्दगी निकालते हैं। शोभालालजी! समझ में आया?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : अभी आयेगा न! आया नहीं। अभी आता है।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : पर्याय नहीं। वह तो त्रिकाली गुण है। वह अभी आयेगा न?

कल कहा था। चार पर्याय, भाव अर्थात् पर्याय, वह आवरणसंयुक्त है। क्योंकि उसमें कर्म के निमित्त की, राग, दया, दान, भक्ति में निमित्त की अपेक्षा है और उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक में निमित्त के अभाव की अपेक्षा है। अपेक्षित भाव है तो चार को आवरणसंयुक्त कह दिया है। आहाहा! समझ में आया? अलौकिक मार्ग है भाई! दुनिया को सुनने को नहीं मिलता, इसलिए एकान्त है रे एकान्त है।.... अरे! भगवान! सुन तो सही, प्रभु! तीन लोक का नाथ चिदानन्द, अनन्त सिद्ध जिसके पेट में—गर्भ में स्थित हैं, ऐसा परमात्मा तू है, तेरा स्वरूप ध्रुव है।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : केवलज्ञान है, वह भी सापेक्ष है, ज्ञानावरणीय का निमित्तरूप अभाव हुआ तो वह भी आवरणसहित कहने में आया है। केवलज्ञान की पर्याय भी आश्रय करनेयोग्य नहीं। आहाहा! गजब बात, भाई!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : निरपेक्ष किस अपेक्षा से? स्वभाव की अपेक्षा से प्रगट हुआ है, उस अपेक्षा से निरपेक्ष और निमित्त की अपेक्षा से लो तो वह सापेक्ष है। केवलज्ञान निरपेक्ष, ऐसा कहा है न? १४वीं गाथा। वह तो निरपेक्ष का अर्थ, जिसको आवरण का वर्तमान निमित्त का बिल्कुल अंश रहा नहीं। इस अपेक्षा से निरपेक्ष, परन्तु निमित्त का अभाव हुआ, इस अपेक्षा से सापेक्ष है। आहाहा! ऐसी कठिन बात। पोपटभाई! यह सब ध्यान रखना पड़ेगा। यह पूछा, वह आया नहीं कल दोपहर का। पैसे का कितना याद रहता है वहाँ अन्दर? थाणा में इतने डाले हैं और उसमें यह डाले हैं और अहमदाबाद में यह डाले हैं। ऐई! चिमनभाई! यह तुम्हारे समधी को... आहाहा!

भगवान! यह देह, वाणी, मन की क्रिया तो पर जड़ है, उसके साथ तो आत्मा को कुछ सम्बन्ध नहीं है। अन्दर में दया, दान, व्रत, भक्ति के परिणाम उठते हैं, वह राग, शुभराग। वह भी आश्रय करनेयोग्य नहीं और धर्म नहीं है। अब जो आत्मा अन्दर ध्रुव चिदानन्द भगवान परमस्वभावभाव नित्यानन्द, निष्क्रिय (है, वह) वर्तमान पर्याय से दूर है।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। चाहे तो क्षायिक समकित की पर्याय हो या क्षायिक चारित्र की पर्याय हो, एक समय की पर्याय से ध्रुवतत्त्व दूर है। क्योंकि एक पर्याय में ध्रुवतत्त्व आता नहीं। आहाहा! कठिन बात, भाई! सेठ! यह समझना पड़ेगा, हों! यह अद्धर से अद्धर नहीं चलेगा। आहाहा! पर शरीर, वाणी, कर्म से तो दूर भगवान। दया, दान, व्रत के परिणाम से दूर प्रभु, परन्तु उसकी उत्पाद-व्यय की धर्म की वीतरागी पर्याय, केवलज्ञान की पर्याय, क्षायिक समकित की पर्याय, एक समय की अवस्था से प्रभु दूर है। ध्रुवतत्त्व भगवान पर्याय में आता नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : तादात्म्यसम्बन्ध नहीं। नित्य के साथ तादात्म्यसम्बन्ध हो तो पर्याय नित्य हो जाये अथवा द्रव्य क्षणिक हो जाये। क्या कहते हैं? सुनो। यह भाई ने प्रश्न रखा इस प्रकार से। एक समय की पर्याय के साथ त्रिकाली ध्रुव यदि तादात्म्य हो। तो या पर्याय नित्य हो जाये, या नित्य क्षणिक हो जाये। ऐसा है नहीं। समझ में आया? आहाहा! अलख के घर पहिचानना, वह अलौकिक बात है, भाई! वह साधारण की बात नहीं है। आहाहा! अलख को कैसे पहिचानना? भजन आता है। 'फकीरे काढ्यो फतवो...' यह फतवा निकालते हैं कि व्यवहार बिना नहीं होता, अमुक बिना नहीं होता। फतवा सब फकीर के जैसा है। ऐई! भगवान! फतवा समझते हो? फतवा को क्या कहते हैं?

मुमुक्षु : .... उसका नाम फतवा।

पूज्य गुरुदेवश्री : फतवा। हाँ, वह खोटा... खोटा। फतवा का अर्थ खोटा। आहाहा! देखो तो सही क्या (कहते हैं)?

भगवान आत्मा की पर्याय में—अवस्था में वह चार प्रकार की अवस्था होती है। एक समय की अवस्था। चाहे तो राग हो, चाहे तो क्षायिक समकित हो, चाहे तो केवलज्ञान हो। एक समय की अवस्था है। तो एक समय की पर्याय उसको आश्रय करनेयोग्य नहीं, इस अपेक्षा से... उसको निर्मल पर्याय में निमित्त कर्म का अभाव

देखकर अपेक्षा आयी, तो कहते हैं कि चारों पर्याय आवरणवाली है। निरावरण प्रभु ध्रुव त्रिकाली निरावरण वस्तु है। समझ में आया? आहाहा!

पूर्वोक्त चार... पर्याय। भाव अर्थात् पर्याय अर्थात् अवस्था। पर्यायदृष्टिवन्त को, कहते हैं कि पर्याय के ऊपर जिसका लक्ष्य है, वह तो मिथ्यादृष्टि है। उसको उपशम और क्षयोपशम और क्षायिक समकित होता नहीं। आहाहा! कहते हैं कि यह चार होने से आवरणसहित अर्थात् निमित्त की अपेक्षावाले और अभाववाले **मुक्ति का कारण नहीं है।** अब मुक्ति का कारण कौन है?

त्रिकाल निरुपाधि जिसका स्वरूप है... त्रिकाल भगवान ध्रुव चैतन्यबिम्ब, अविनाशी है। पर्याय तो विनाशीक है। चाहे तो केवलज्ञान की पर्याय हो, चाहे तो क्षायिक समकित की पर्याय हो, वह विनाशीक है। एक समय की पर्याय विनाशीक है। आहाहा! **त्रिकाल निरुपाधि जिसका स्वरूप है...** तीनों काल ध्रुव भगवान जिसमें कोई आवरण नहीं, कोई अपेक्षा नहीं—ऐसा जो ध्रुव, जिसका स्वरूप है। **ऐसे निरंजन...** जिसमें अंजन नहीं, मैल नहीं। **निज परम पंचम भाव...** देखो! निज परम पंचम भाव। वह चार भी भाव है, परन्तु यह तो त्रिकाली ध्रुव निज परम पंचम भाव—पारिणामिकभाव। **(पारिणामिकभाव की) भावना से...** ऐसे पंचम भाव की भावना से। भावना शब्द से ध्रुवस्वभाव में एकाग्रता से। पर्याय तो वापस उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक आयी। परन्तु ध्रुव में एकाग्रता है, पर्याय में एकाग्रता नहीं। आहाहा! समझ में आया? बाहर का जहाँ सँभालने जाये, वहाँ अन्दर का खो जाता है, बाहर का जहाँ याद करने को जाये तो अन्दर का खो जाता है, उसकी खबर नहीं। आहाहा! समझ में आया?

मुमुक्षु : पर्याय....

पूज्य गुरुदेवश्री : .... ऐसे-ऐसे रखूँ, पर्याय ऐसी रखूँ, पर्याय से सुधारूँ। बाहर का ऐसा सुधारूँ, वह दृष्टि मिथ्यात्व है। पर्याय की सम्हाल करने को गया, वह तो मिथ्यादृष्टि है। आहाहा! समझ में आया? ... दासजी! यह तो अलौकिक बात है। ऐसी बात तो किसी समय निकले तो सुनने में आवे। हर बार (नहीं आती)। पाठ शास्त्र सामने हो तो कहने में आवे।

भगवान आत्मा... आत्मा जिसको निश्चय आत्मा कहते हैं, निश्चय आत्मा। वह तो पर्याय से भिन्न जो ध्रुव है, वह नित्य आत्मा है। पर्याय का आत्मा को तो व्यवहार आत्मा कहते हैं। वह तो व्यवहार अभूतार्थ है। वह व्यवहार (आत्मा) सत्य आत्मा नहीं है। आहाहा! कठिन बात, भाई! अमरचन्दभाई! भगवान! कहते हैं, पर्यायमात्र व्यवहार का विषय है; द्रव्य, वह निश्चय का विषय है। आहाहा! पर्याय में रहकर यह ध्रुव है, ऐसा भी माने तो पर्याय ने ध्रुव को दूर रखा है। परन्तु पर्याय ध्रुव में प्रविष्ट होने से (— झुकने से), अन्दर में प्रविष्ट होने से ध्रुव में एकाकार होती है, उसको पंचमभाव की भावना कहा जाता है। आहाहा! प्रसन्नकुमारजी! उसको रस है या नहीं? उसको रस है। कल प्रश्न करते थे। समझ में आया?

अरे! भगवान! कहते हैं, तीन लोक के नाथ सर्वज्ञ परमेश्वर ने कहा, वह सन्त कहते हैं। यह शास्त्र मैंने भाषा द्वारा बात आ गयी। ओहोहो!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : .... पर्याय द्रव्य में जाये, एकाकार हो। यह पर्याय यहाँ ले जाये, वह बात भी झूठी है। सूक्ष्म बात है, भाई! वह तो ध्रुव पर दृष्टि गयी, तब वह पर्याय अन्दर में प्रविष्ट हुई, ऐसा कहने में आता है। सूक्ष्म बात है, भाई! चलती पर्याय के साथ... वर्तमान चलती उस पर्याय को अन्दर झुकाऊँ, वह भी पर्यायदृष्टि हो गयी। कैसे झुके? वह पर्याय चलती है, वह तो है। अब जब दूसरे समय में अन्दर में झुकाता है, वह तो पर्याय है ही नहीं। पण्डितजी! यहाँ तो अलौकिक बात है। आहाहा!

राग की तो बात ही नहीं। दया, दान, विकल्प से, भक्ति से लाभ हो, वह बात तो तीन काल में है नहीं। परन्तु एक चलती पर्याय को, इस पर्याय को अन्तर में झुकाऊँ। कहाँ झुकाये? वह तो उत्पन्न हुई है और जो पर्याय उत्पन्न नहीं हुई है, उसको झुकाऊँ, यह क्या है? इसका अर्थ यह है कि ध्रुवस्वरूप भगवान आत्मा में दृष्टि गयी, वह पर्याय नयी उत्पन्न हुई और द्रव्य को अवलम्बन किया। समझ में आया? ध्यान रखे तो समझ में आये ऐसा है। न समझ में आये, ऐसा नहीं है। सादी भाषा में भाव आते हैं। कठिन बातें नहीं हैं। आहाहा! क्या गम्भीर तत्त्व!

कहते हैं कि **त्रिकाल निरुपाधि जिसका स्वरूप है....** जिसका त्रिकाल निरुपाधिस्वरूप भगवान ध्रुव। **ऐसे निरंजन निज परम पंचमभाव...** भगवान का पंचम भाव भगवान के पास रहा। सिद्ध के द्रव्य का पंचम भाव सिद्ध के पास रहा। हमारे क्या काम का है? यहाँ तो कहते हैं कि हमारी पर्याय भी हमारे काम की नहीं। आहाहा! क्योंकि पर्याय में से नयी पर्याय उत्पन्न नहीं होती। नयी उत्पन्न पर्याय—वीतरागी पर्याय की खान तो ध्रुव है। तो ध्रुव भगवान की भावना, पंचम भाव की भावना... है न! पण्डितजी! है ने, देखो! परमपारिणामिकस्वभाव ध्रुव चैतन्यद्रव्य, ध्रुव पंचम पारिणामिकभाव की भावना से—उसकी एकाग्रता से... उसकी एकाग्रता से पंचम गति में—मोक्षगति में मुमुक्षु जाते हैं। **(वर्तमान काल में) जाते हैं...** समझ में आया? आहाहा! कहो, भीखाभाई! हीराभाई रखे हैं या नहीं साथ में? कहो, आहाहा!

भगवान आत्मा त्रिकाली ध्रुवबिम्ब। काँच होता है न? दर्पण... दर्पण। दर्पण का दृष्टान्त आता है। भाई ने तो बहुत दिया है निहालभाई ने। यह दर्पण है न दर्पण? अरीसा को क्या कहते हैं? शीशा-दल। तो ऊपर की पर्याय में सब अवस्था होती है। उस पर्याय के अतिरिक्त का सारा दल है, उसमें तो वह पर्याय है ही नहीं। दर्पण का दल है, जो ध्रुव दल है, उसमें तो वर्तमान पर्याय दर्पण की अन्दर नहीं है। जो दर्पण में लाल, पीला, आदि दिखने में आता है, वह तो दर्पण की एक समय की पर्याय है। वह पर्याय दर्पण का जो दल है, पिण्ड है, कन्द है पूरा पूर्ण, उसमें पर्याय का अभाव है। सारा दर्पण एक पर्याय में आ नहीं जाता। आहाहा! सेठ! और दर्पण की एक समय की पर्याय उस दल में प्रवेश नहीं करती। दोनों भिन्न-भिन्न हैं। समझ में आया?

इसी प्रकार भगवान आत्मा ध्रुवदल, नित्यदल, सच्चिदानन्द प्रभु पूर्ण, वह एक समय की अवस्था में आता नहीं और एक समय की अवस्था ध्रुव में प्रविष्ट नहीं होती। आहाहा! गजब बात, भाई! समझ में आया? कहो, पन्नालालजी! ऐसी बात है। यह हिन्दी में आयी। परन्तु हिन्दी में तो जो भाव हो, वह आते हैं, दूसरे कहाँ से आये?

शरीर, वाणी की क्रिया जड़ की जड़ में, मन की मन में, वाणी की वाणी में, जड़ की-शरीर की जड़ में और दया, दान, विकल्प उठते हैं, भक्ति आदि, वह राग आस्रवतत्त्व

में। और उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक तत्त्व उत्पन्न होता है, वह तो एक समय की पर्यय तत्त्व में; ध्रुव तत्त्व में वह है नहीं। आहाहा! कठिन बात, भाई!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा है या नहीं? निर्णय करो, निर्णय तो करो पहले। सामान्य जो ध्रुव है, वह एक समय में जो यह जाये तो एक समय की अवस्था जितना ध्रुव हो जाये। और एक समय की विशेष अवस्था है, विशेष अवस्था चाहे तो क्षायिक समकित हो, केवलज्ञान की हो, एक समय की अवस्था जो ध्रुव में—सामान्य में प्रविष्ट हो जाये, तो एक समय की अवस्था नित्य हो जाये। पर्याय तो अनित्य है। आहाहा! प्रेमचन्दभाई! सूक्ष्म बात है। कहो, सेठ! पूछेंगे तो आयेगा या नहीं? हँसते हैं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : प्रयत्न कहाँ इतना करते हैं, दरकार करते हैं अभी? इतनी अधिक दरकार नहीं है। आहाहा!

भगवान अन्दर चिद्घन है, ज्ञान का दल है, आनन्द का दल है, ध्रुव बिम्ब है, जिसमें अनन्त सिद्ध की पर्याय जिसके दल में अन्दर पड़ी है। ऐसा चिद्घन ध्रुव परमस्वभावभाव उसमें चार पर्याय नहीं है, वह भाव दूर है। आहाहा! ऐसी बात! सर्वज्ञ वीतराग के अतिरिक्त यह मार्ग दूसरी किसी जगह नहीं हो सकता। तीन काल, तीन लोक में। ओहोहो!

यहाँ तो कहते हैं कि पंचम भाव की भावना। ऐसा कहा न? पर्याय की भावना करे पर्याय में रहकर, तो भी वह तो पर्याय में खड़ा है। ध्रुव में खड़ा नहीं हुआ। तो पर्याय में दया, दान, व्रत आदि का पर्याय में लक्ष्य करे, और वहाँ रहे, वह तो पर्यायबुद्धि, वह तो अंशबुद्धि हुई। वह तो पर्याय में रमते हैं, मिथ्यात्व में रमते हैं। समझ में आया? यहाँ तो भगवान आत्मा निज परम पंचम भाव। भगवान आत्मा का निज अर्थात् अपना, परमभाव, पंचम भाव, ध्रुवभाव, नित्यभाव, स्वभावभाव, सदृश्यभाव, सामान्यभाव... समझ में आया? ऐसे दल की भावना से... यह भावना वीतरागीपर्याय है। सम्यग्दर्शन-

ज्ञान-चारित्र वह पंचम भाव की भावना है। यह नियमसार देखा है या नहीं? पढ़ा है या नहीं पण्डितजी!

मुमुक्षु : ....अभिप्राय में भूल हुई।

पूज्य गुरुदेवश्री : थोड़ी नहीं, हो तो पूरी, न हो तो कुछ नहीं। समझ में आया? निर्णय करो पहले। पहले विकल्पसहित भी ऐसा निर्णय न हो, उसको निर्विकल्प दृष्टि कभी होती नहीं। समझ में आया? आहाहा! 'प्रभु तारी पासे रे प्रभु नथी वेगळो।' पर्याय में आवे नहीं ऐसा प्रभु तेरे पास पड़ा है न, भगवान! आहाहा! यह तो मोक्षमार्ग की पर्याय और मोक्ष की पर्याय से दूर है, अनमेल है। आहाहा! देखो से सही भेदज्ञान!

ऐसी भावना से... ऐसी पंचम भाव की भावना से... पंचम भाव त्रिकाली हुआ। भावना, वह वर्तमान पर्याय है। परन्त पंचम भाव की भावना से, ऐसे। ध्रुव की ओर दृष्टि करने से जो एकाग्र हुआ, उसका नाम भावना कहने में आता है। उस भावना में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों आ जाते हैं। पाठ है?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह अभी ठिकाने नहीं पड़े, रात्रि में पूछना। कहो, समझ में आया? यह तो अलौकिक मार्ग है। यह ऐसे ही पकड़ में आवे, ऐसा नहीं है।

भगवान ध्रुवस्वरूप है, उसकी भावना... भाव की भावना... त्रिकाली ध्रुव की भावना... उसकी भावना। पर्याय की नहीं, राग की नहीं, निमित्त की नहीं, राग हो—शुभराग हो, थोड़ा है तो बढ़ो, वह तो दृष्टि पर्यायबुद्धि मिथ्यादृष्टि है। आहाहा!

मुमुक्षु : त्रिकाली ध्रुवस्वभाव की....

पूज्य गुरुदेवश्री : त्रिकाली ध्रुवस्वभाव की भावना—अन्तर में एकाग्रता, ध्रुव में एकाग्रता। वह एकाग्रता है तो पर्याय। परन्तु वह ध्रुव सम्बन्धी लीनता। पर्याय में पर्याय की लीनता नहीं। समझ में आया? आहाहा! अरे! मार्ग तो देखो! तीन लोक का नाथ पूर्णानन्द से भरा हुआ है प्रभु। कहते हैं कि उस पर नजर करके उसमें एकाग्र हो, वह भावना। उसको सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ध्रुव के लक्ष्य से, आश्रय से हुई दशा, उसको

यहाँ भावना कहते हैं। यह भावना अर्थात् कल्पना, ऐसा नहीं। उसमें एकाग्रता-लीनता। ध्रुव में लीन। ध्रुवबिम्ब में दृष्टि का प्रसार, ध्रुव में दृष्टि का प्रसार, ध्रुव में दृष्टि का विस्तार, दृष्टि ने पूरे ध्रुव को कब्जे में कर लिया है। ऐई! धर्मचन्दजी!

ऐसी **ऐसी भावना से पंचम गति में...** देखो! पंचम भाव की भावना से पंचम गति में **मुमुक्षु (वर्तमान काल में) जाते हैं,...** अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान भी ध्रुव पारिणामिकभाव के आश्रय से वर्तमान सम्यग्दर्शन होता है, सम्यग्ज्ञान होता है, सम्यक्चारित्र होता है, आगे बढ़कर शुक्लध्यान भी ध्रुव के आश्रय से होता है, आगे बढ़कर केवलज्ञान भी ध्रुव के आश्रय से होता है और पूर्ण सिद्धदशा भी ध्रुव के आश्रय से होती है।

मुमुक्षु : ....ध्रुव का आश्रय करने से ही होती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : बस, यही बात है। समझ में आया?

पंचम भाव की... **परम पंचम भाव...** क्योंकि पर्याय को भी पारिणामिकभाव की पर्याय कहने में आता है। वह दया, दान, व्रत, काम, क्रोध का परिणाम है, वह कर्म के निमित्त की अपेक्षा से उदय, परन्तु पारिणामिकभाव की अपेक्षा से पारिणामिकभाव की पर्याय। वैसे उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक भी परमपारिणामिकभाव की अपेक्षा से पारिणामिक पर्याय, उस पर्याय से भिन्न त्रिकाली परमपारिणामिक। समझ में आया? कहा न? डॉक्टर! ... क्या कहा? अभी क्या कहा?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : वह कहा ही नहीं। ख्याल में लिया नहीं।

आत्मा में जो पुण्य-पाप का भाव होता है, वह निमित्त की अपेक्षा से उदय कहो, परन्तु पारिणामिकभाव परमभाव है, वह पर्यायरूप परिणमता है तो उसको भी पारिणामिकभाव की पर्याय (कहने में आता है)। परमपारिणामिक भिन्न। वह कुछ नहीं अभी। ऐसा कहकर स्पष्टीकरण कराते हैं। वह तो पारिणामिक रागादि विकल्प जो दया, दान, काम, क्रोध का मिथ्यात्वपरिणाम है, वह भी पारिणामिकभाव की पर्याय है। पर्याय। परमपारिणामिक है, वह ध्रुव। आहाहा! वह कहा था। आपका ध्यान नहीं था। समझ में आया?

बापू! मार्ग कोई ऐसा अलौकिक है कि लोगों को ऐसे ही अपनी कल्पना से पढ़े, अपनी कल्पना से बिठाये और कल्पना से वीतरागमार्ग को उल्टा माने और हम वीतरागमार्ग कहते हैं, ऐसा कहते हैं। यहाँ तो कहते हैं... परम पंचम भाव क्यों कहा? परम पंचम भाव। परम पंचम भाव ध्रुव है और उसकी पर्याय राग, दया, दान, काम, क्रोध की पर्याय, वह भी पारिणामिकभाव की एक समय की पर्याय है। उसको पारिणामिकभाव कहते हैं। परमपारिणामिक नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह पारिणामिक है, कहते हैं। और यहाँ तो उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक चारों पर्याय को अन्तर की अपेक्षा से, निज की ओर की अपेक्षा से उसको चारों को पारिणामिक की पर्याय कहते हैं। कर्म की अपेक्षा से उसको उदय क्षयोपशम, क्षायिक, उपशम कहते हैं। परन्तु वह पारिणामिकभाव की जो पर्याय है, वह पारिणामिकभाव पर्याय, परन्तु ध्रुव है, वह पंचम पारिणामिक त्रिकाल भाव है। आहाहा! सेठ! सेठ ऐसे मान हो जाये, वहाँ बैठे हों तो मानो ऐसा लगे चतुर बड़ा दुकान पर।

मुमुक्षु : कुछ याद नहीं रहता।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसमें याद कहाँ रखने का है? यह तो तत्त्व की बात है सीधी। आहाहा!

त्रिकाली भगवान जो ध्रुव है, वह परमपारिणामिकभाव है और उसकी पर्याय चार है, वह पारिणामिकभाव की पर्याय-अंश है। परिणाम वह अंश है, परन्तु वह परमपारिणामिक नहीं। समझ में आया? परमपारिणामिक ध्रुव भगवान आत्मा नित्यानन्द पर्याय से भिन्न, उसकी भावना से..., उदय की, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक की एकाग्रता से नहीं। वह ध्रुव की एकाग्रता से पंचम गति में मुमुक्षु—धर्मात्मा मोक्ष जाते हैं। समझ में आया? आहाहा!

सम्यग्दर्शन की पर्याय, वह भी पंचम भाव की एकाग्रता से होती है। आहाहा! यह तो वह कहते हैं, तीन करण से शुद्धभाव से होती है। तीन करण लिये ही नहीं हैं, सुन न! बहुत विवाद करे विद्वान बड़े। बापू! उसको विद्वान नहीं कहते। यहाँ कहेंगे।

अभी आयेगा। आहाहा! भगवान आत्मा मैं जो हूँ, वह तो पर्याय से भिन्न हूँ। मुझमें पर्याय परिणमन करो, परन्तु मैं परिणमन की पर्याय में आता नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हो, वह तो पर्याय का धर्म है परिणमन करना। मेरा धर्म नहीं। आहाहा!

पंचम गति में मुमुक्षु (वर्तमान काल में) जाते हैं,... एक ही मार्ग है, ऐसा कहते हैं। तीन काल में एक ही मार्ग है। पंचम काल के लिये कोई दूसरा मार्ग है और महाविदेह का दूसरा मार्ग है और भरत का दूसरा मार्ग है—ऐसा नहीं है। भूतकाल का दूसरा मार्ग और भविष्य काल का दूसरा मार्ग, कठिन पंचम काल में दूसरा मार्ग। (ऐसा नहीं है)।

मुमुक्षु : आज कल तो लोग....

पूज्य गुरुदेवश्री : इसीलिए तो स्पष्टीकरण करते हैं। आहाहा!

भाई! सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो निर्मल पर्याय, जो यह नियमसार है, निश्चय मोक्षमार्ग, हों! व्यवहारमोक्षमार्ग, वह मार्ग है ही नहीं। विकल्प, वह मोक्षमार्ग है ही नहीं। निश्चय मोक्षमार्ग की जो निर्मल सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की वीतरागी पर्याय, वह पंचम भाव ध्रुव के आश्रय से उसमें एकाग्रता से उत्पन्न होती है, और उस पंचम भाव के आश्रय से ही आत्मा को केवलज्ञान और मुक्ति होती है।

(भविष्य काल में) जायेंगे... भविष्य अनन्त काल है, उसमें भी ध्रुवस्वभाव की एकाग्रता से मोक्ष जायेंगे। कोई दूसरा मार्ग वीतराग में है नहीं। **और (भूतकाल में) जाते थे।** जाते थे। भूतकाल में भी ध्रुव पंचमभाव की एकाग्रता से मोक्ष भूतकाल में अनन्त गये, वर्तमान में जाते हैं और भविष्य में जायेंगे। 'एक होय तीन काल में परमारथ का पंथ।' यह परमार्थ का एक पंथ है। महासिद्धान्त की (बात) है।

(अब, ४१वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज दो श्लोक कहते हैं :-) वह तो टीका थी, अब श्लोक है।

(आर्या)

अंचितपंचमगतये पंचमभावं स्मरन्ति विद्वान्सः।
संचितपंचाचाराः किंचनाभावप्रपंचपरिहीणाः॥५८॥

श्लोकार्थ - (ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्यरूप) पाँच आचारों से... पाँच आचार... आचार / पर्याय। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र, तप और वीर्य— पाँचों वीतरागी पर्याय, वीतरागीदशा, निर्विकल्पदशा। इन **पाँच आचारों से युक्त...** सहित। **और किंचित् भी परिग्रह प्रपंच से सर्वथा रहित...** मुनि कहते हैं न? मुनि की बात मुख्य लेते हैं न? **किंचित् भी परिग्रह प्रपंच से सर्वथा रहित...** मुनि को तो एक वस्त्र का टुकड़ा भी परिग्रह नहीं होता। वस्त्र का एक टुकड़ा हो और मुनिपना माने, वह मिथ्यादृष्टि है।

मुमुक्षु : व्यवहार पंचाचार....

पूज्य गुरुदेवश्री : व्यवहार पंचाचार भी नहीं, वह तो विकल्प है। यहाँ तो निश्चय पंचाचार की बात है। आहाहा! समझ में आया?

पाँच आचारों से युक्त किंचित् भी परिग्रह प्रपंच से सर्वथा रहित... इससे सहित और इससे रहित, ऐसे अस्ति-नास्ति की है। **ऐसे विद्वान...** ऐसे विद्वान... उसको विद्वान कहते हैं और उसको ज्ञानी कहते हैं। बाकी शास्त्र की पढ़ाई की हो और उल्टा करे, वह विद्वान है नहीं। है उसमें, देखो! **ऐसे विद्वान पूजनीय पंचमगति को प्राप्त करने के लिये...** पूजनीय पंचमगति-मुक्ति को प्राप्त करने के लिये **पंचम भाव का स्मरण करते हैं।** स्मरण अर्थात् पंचम भाव में एकाग्र होते हैं। स्मरण करते हैं अर्थात् ऐसे (विकल्प से) स्मरण नहीं। पंचम भाव को याद करके एकाग्र होते हैं। आहाहा! कठिन बातें, भाई!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : आत्मा के पुरुषार्थ की अन्तर विकाररहित—निर्विकार की रचना होना, वह वीर्याचार है। वीतरागी पर्याय की रचना होना, वह वीर्याचार का काम है। व्यवहार पंच विकल्प आदि हैं, व्यवहार, वह नहीं। वह बन्ध का कारण, वह आत्मा

के स्वभाव का कारण है ही नहीं। वह आगे कहेंगे।

विद्वान पूजनीय पंचम गति को प्राप्त करने के लिये पंचम भाव का... पंचम भाव अर्थात् पंचम त्रिकाली भाव का स्मरण अर्थात् एकाग्रता करते हैं तो उसको मुक्ति होती है। मुक्ति होती है। पंचम भाव की एकाग्रता से मुक्ति होती है। ऐसा कहा न। ध्यान रखो तो हाँ, ना का ख्याल रहे। यह तो अलौकिक बात है, भाई! यह तो केवलज्ञानी की सभा है। केवलज्ञानी की बात है यह सब। समझ में आया? आहाहा!

दूसरा श्लोक—

(मालिनी)

सुकृतमपि समस्तं भोगिनां भोगमूलं
त्यजतु परमतत्वाभ्यासनिष्णातचिततः।
उभयसमयसारं सारतत्वस्वरूपमं
भजतु भवविमुक्त्यै कोऽत्र दोषो मुनीशः ॥५९॥

श्लोकार्थ - समस्त सुकृत (शुभकर्म) भोगियों के भोग का मूल है;... आहाहा! व्यवहार समकित, व्यवहार चारित्र, व्यवहार ज्ञान—यह सब राग भोगियों के भोग का मूल है। आहाहा!

मुमुक्षु : मुनि को चलता है न? दूसरे को दिक्कत नहीं न?

पूज्य गुरुदेवश्री : अरे! ज्ञानी-समकिती की बात चलती है। जो कुछ भी शुभभाव है, वह भोगियों के भोग का मूल है। आत्मा के भोग का वह मूल है नहीं। समझे? शुभभाव भोगियों के भोग का मूल है। धर्मी—अनुभव के भोगनेवाले को वह शुभभाव होता नहीं। है तो अपना है नहीं। उससे लाभ मानते नहीं। आहाहा! कठिन बात, भाई! सोनगढ़ के नाम से फिर लोग कहे न, भाई! यह भगवान कहते हैं या सोनगढ़ कहता है? कौन कहता है? सुन तो सही! ऐई!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : तो दूसरा अर्थ क्या है, उसमें निकाले न उल्टा। उल्टा निकाल सके न, कहाँ से निकाले?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : भोगियों के भोग का मूल है। समस्त शुभ किसी भी प्रकार का हो, ऐसे। चाहे (कोई भी) प्रकार के महाव्रत के परिणाम हो, समझ में आया? अट्ठाईस मूलगुण का हो, षट् आवश्यक का हो, भगवान की भक्ति का हो, शास्त्र वाँचन का शुभभाव हो, भगवान के स्मरण का, नामस्मरण का भाव हो, वह सब भोगियों के भोग का मूल है। धर्मी का वह मूल है नहीं। आहाहा! कठिन काम, भाई!

मुमुक्षु : पंचम भाव की माला जपे।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह मैं पंचम भाव हूँ, पंचम भाव हूँ—ऐसा विकल्प करे तो कहाँ आया उसमें? वह तो विकल्प है। आहाहा! ध्रुव आत्मा है, शुद्ध है, अबद्ध है, निर्मल है, ध्रुव है—वह तो विकल्प है। भोगियों के भोग का मूल वह विकल्प है। आहाहा!

त्रिकाल ध्रुव भगवान आत्मा में दृष्टि लगाकर एकाकार होना, वह मोक्ष का मूल है। आहाहा! कठिन बातें, भाई! अशुभभाव में था तो वहाँ लगा था, चिपका था। शुभभाव में आया देव, गुरु, शास्त्र की भक्ति में, वहाँ चिपट गया। वह तो एक ही दशा है। समझ में आया?

समस्त सुकृत... समस्त सुकृत... कोई भी शुभभाव, ऐसा। चाहे तो दया का, दान का, भक्ति का, पूजा का, नामस्मरण का, णमो अरिहंताणं, पंच परमेष्ठी की यादगीरी हो, ॐ... ॐ... ॐ... वह विकल्प है, वह भोगियों के भोग का मूल है। शोभालालजी! सच क्या? है उसको सच है क्या? है या नहीं उसमें? पुस्तक सामने रखा है, इसलिए तो रखा है।

मुमुक्षु : इसमें स्पष्ट लिखा है, निश्चय की बात है परन्तु व्यवहार की बात नहीं लिखी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : व्यवहार की बात अर्थात् व्यवहार अर्थात् झूठा। झूठ की बात यहाँ नहीं है। निश्चय अर्थात् यथार्थ सत्य। वह सत्य की बात है यह। असल में वही वस्तु की मान्यता और ज्ञान करनेयोग्य है। बाकी सक एक के बिना के शून्य हैं। चाहे

तो पाँच महाव्रत पाले, अट्ठाईस मूलगुण पाले, भगवान की भक्ति पूरे दिन णमो अरिहंताणं... णमो अरिहंताणं... णमो अरिहंताणं... णमो अरिहंताणं... राम... राम... राम... राम... राम...राम में फिर मरा हो जाता है अन्दर। समझ में आया कुछ?

समस्त सुकृत (शुभकर्म) भोगियों के भोग का मूल है; परम तत्त्व के अभ्यास में निष्णात चित्तवाले मुनिश्वर... अर्थात् धर्मात्मा। परमतत्त्व भगवान आत्मा परमतत्त्व। पर्याय अपरमतत्त्व। ध्रुव तत्त्व पंचम भाव परमतत्त्व। त्रिकाली पंचम भाव, वह परमतत्त्व। संवर, निर्जरा, मोक्ष भी परमतत्त्व नहीं। वह अपरमतत्त्व (क्योंकि) पर्याय है। गुण और भाव एक ही है। द्रव्य और गुण दोनों एक अभेद है। गुण और द्रव्य, द्रव्य किसे कहना? गुणों के पिण्ड को द्रव्य कहना। गुण और द्रव्य भिन्न है न?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : एक भेद... दूसरा भेद है कहाँ अन्दर? जो गुण का पिण्ड है, वह द्रव्य। द्रव्य का अर्थ क्या? द्रव्य कोई दूसरी चीज़ है? और कोई दूसरी चीज़ गुण है? अनन्त गुण का पिण्ड ध्रुव, उसे द्रव्य कहते हैं। एकरूप कहना, वह तो द्रव्य और अनन्तरूप गुण कहना हो तो गुण। परन्तु यह गुण है और यह गुणी, ऐसा भेद करे तो वह विकल्प है। उसके आश्रय से भी सम्यग्दर्शन नहीं होता। अभेद की दृष्टि करने से सम्यग्दर्शन होता है। बाकी कोई तीन काल-तीन लोक में दूसरा कोई उसका हेतु—कारण है नहीं। समझ में आया?

परम तत्त्व के अभ्यास में निष्णात चित्तवाले... विचिक्षण—निष्णात पूर्ण। नहीं कहते हैं कि इसमें निष्णांत है? इस बात में निष्णांत है। निपुण। निष्णात है, परिपूर्ण है। ऐसे भगवान आत्मा पंचम भाव को जानने में जो निष्णात है। **मुनिश्वर भय से मुक्त होने हेतु...** चार गति के भव से मुक्त होने हेतु... **उस समस्त शुभकर्म को छोड़ो...** पाठ में है या नहीं? '**त्यजतु**' '**भवविमुक्त्यै त्यजतु**' दृष्टि में से छोड़ा, ऐसे। छोड़ो अर्थात्? दृष्टि के विषय से छोड़ दो। पुण्य-पाप का—पुण्यादि का परिणाम दृष्टि का विषय नहीं। उसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता नहीं।

और सारतत्त्वस्वरूप ऐसे उभय समयसार को भजो। ओहोहो! त्रिकाली भगवान

आत्मा और उसके कारणरूप उसकी निर्मल पर्याय को भजो। उभय समयसार। उभय अर्थात् त्रिकाली ध्रुव समयसार। उसकी एकाग्रता होकर निर्मल वह कारणसमयसार और पूर्ण केवलज्ञान हो, वह कार्यसमयसार। ध्रुव है, वह परम कारणसमयसार। ऐसी कठिन बात, भाई!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : समयसार तीन। उसमें यहाँ दो कहे। त्रिकाली ध्रुव को समयसार कहा और मोक्ष पाने के कारणरूप जो आत्मा की नियमसमयसार वीतरागी पर्याय, वह पर्यायरूप कारणसमयसार। ध्रुव कारण त्रिकाली समयसार और कार्यरूप कार्यसमयसार सिद्ध पद। परन्तु यहाँ दो को भजो। ध्रुव और पर्याय को भजो ऐसे। भजो अर्थात् द्रव्य में एकाग्र हो, ऐसे। प्रगट होता है। परन्तु द्रव्य के आश्रय से—ध्रुव समयसार है, उसकी एकाग्रता होने से मोक्षमार्ग की पर्याय, वीतरागी पर्याय, वीतरागी समकित, वह कारणसमयसार। उसको भजो। **इसमें क्या दोष है?** कहो, ऐसा कहा देखो। **'कोऽत्र दोषो मुनीशः'**

अरे! यह छोड़ना, और इसमें भजना, इसमें क्या दोष है? ऐसा कहते हैं। शुभ परिणाम छोड़ दे? छोड़कर क्या करे? छोड़कर अन्दर में एकाग्र होना, ऐसा कहते हैं। आहाहा! समझ में आया कुछ? भगवान के पास जाये तो भगवान ऐसा कहते हैं कि मेरे सामने देखना छोड़ दे, तेरे सन्मुख देख।

मुमुक्षु : वहाँ भी फटकार लगती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : .... फटकार लगती है। फटकार क्या? कि तुम मेरे सामने देखते हो? तेरे पास पूर्ण है, उसकी ओर देख। ध्रुव के ओर की दृष्टि देख। तुझे लाभ होगा, बाकी लाभ हमारे सन्मुख होने से लाभ होगा नहीं। आहाहा! यह तो वीतराग कहते हैं। दूसरे तो कहे, हमारा भजन करो, हमें आहार दो, पानी, लड्डू। आपका कल्याण हो जायेगा। ऐई! यहाँ तो कहते हैं कि भावलिंगी मुनि को आहार-पानी दे विकल्प, पुण्यबन्ध हो। संवर, निर्जरा जरा भी नहीं होती। आहाहा! समझ में आया? श्वेताम्बर में वह तो लेख है भगवती (सूत्र) में। तथारूप साधु को निर्दोष आहार-पानी

दे तो परितसंसार करे। यह मूल पाठ है। मूल लिखावट ही सारी तत्त्व के विरुद्ध की है। पर क्या करे? तीन सूत्र उसमें बड़ा विवाद हुआ है।

एक सूत्र ऐसा है कि मुनि को निर्दोष पानी दे (उसमें) सदोष थोड़ा हो, तो बहुत निर्जरा और थोड़ा पाप। यह लिया। श्वेताम्बर ने ले लिया। करो साधु के लिये। अब इसमें थोड़ा पाप लगेगा, परन्तु निर्जरा ज्यादा है। धूल में भी नहीं है। तीन सूत्र है भगवती में। एक सूत्र तथारूप साधु को निर्दोष आहार-पानी दे, वह एकान्त से निर्जरा करे। किंचित् पाप... भगवतीसूत्र में है। और असंयमी को देने से एकान्त... तेरापंथी ने वह पकड़ा है। अरेरे!

यहाँ तो कहते हैं कि तथारूप (मुनि) तीर्थंकर तीन लोक के नाथ हों, गृहस्थाश्रम में हो पहले। उनको भिक्षा दे तो शुभराग होगा, संसार परित परद्रव्य के आश्रय से होगा नहीं। समझ में आया? आहाहा! लो, एक पेरेग्राफ रहेगा।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)

- अरे प्रभु! तू स्वभाव से परमेश्वर है। तेरी विरुद्ध की बातें आते करते शर्म आती है! अनादर नहीं आता! कहाँ तेरी शुद्धता और कहाँ यह विकारीभाव— मिथ्यात्व-संसार! अरे! कहाँ नीम के अवतार! निगोद में अवतार! अरे! तू भगवान स्वरूप! भगवान तू कहाँ गया! तेरा विरोध नहीं प्रभु! तुझसे विरुद्ध भाव का विरोध है। जिसकी माँ खानदानी पुत्री, जिसकी आँख ऊँची न हो, उसका पुत्र वेश्या में जाये—इसी प्रकार यह परिणति प्रभु की, जो अपने स्वरूप को छोड़कर विकार में जाये, प्रभु! शर्म आती है। (9)
- वास्तव में तो ऐसा अवसर मिला है, उसमें स्वयं अपना कर लेनेयोग्य है। दुनिया की आलोचना करने जायेगा तो अपना खोयेगा! स्वयं अपनी भूल टालनी है। वस्तुस्वरूप समझकर भूल टाले तो भगवान हो जाये! (10)

— पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी, दृष्टि के निधान